'सूक्ष्म भौतिक लोभकी दोषी'

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

# हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ | सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी | अंक १५

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १३ जून, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

## कार्यकर्ताओंसे

[चांडिल सर्वोदय-सम्मेलनमें ता० ९-३-'५३ की शामको दिये गये विनोबाजीके भाषणकी दूसरी और अंतिम किस्त नीचे दी जाती है।]

### संयोगसे शक्तिका निर्माण

अब तीसरा दोष, जिसका अुल्लेख मैंने अपने पहले व्याख्यानमें किया था, वह फिरसे दोहराता हूं। हम लोगोंमें शक्ति कम नहीं है और लोगोंकी हम पर आशा भी बहुत है; तिस पर भी हो यह रहा है कि हमारे सारे काम बिलकुल अलग-अलगसे हो रहे हैं और किसीके कामका किसीको पता तक नहीं होता, अैसी भी हालत है। अिसलिअे नतीजा अुसका यह होता है कि प्रत्यक्ष कोअी रूप प्रकट नहीं होता। अेक शख्सके पास तेलकी बोतलें पड़ी हैं, दूसरे शख्सके पास माचिसका भंडार पड़ा है और तीसरे शख्सके पास बहुतसे लालटेन पड़े हैं; फिर भी जब तक अुनका योग नहीं होता, तब तक प्रकाश नहीं होता, अंधकार ही कायम रहता है। तो अिस तरह हमारा चल रहा है।

### शक्तिका केन्द्रीकरण हो

कताअी-मंडल स्थापित होते हैं, तो बिचारे हफ्तेमें अेक बार कातते हैं, अिकट्ठा होते हैं, कुछ काम करते हैं और घर पर चले जाते हैं। अुनका कोअी प्रचार दुनियामें नहीं होता। अुनकी खुदकी स्फूर्ति भी दिन-ब-दिन कम होती जाती है। पचास मंडल स्थापित हुअे, अुनमें से पच्चीस गिर गये। और बाकीके पच्चीस कुछ काम तो करते हैं, लेकिन अुनका पता दूसरोंको नहीं होता। ग्रामोद्योग-संघको अिसकी फिक्र नहीं कि कताअी-मंडल कहां स्थापित हुअे। फेहरिस्त तो अुनकी आती है, लेकिन वह देखनेकी जिम्मेवारी अुन पर नहीं है। अब ग्रामोद्योगकी बात अगर नहीं चलती है, तो अुसके बारेमें चौकन्ना रहनेकी जिम्मेवारी चरखा-संघ पर नहीं है। अिस तरह हमारा सारा काम चल रहा है। यह गलत है। अुसमें शक्ति नहीं है, यह सब जानते हैं। फिर भी चार-पांच साल हुअे, वह चल ही रहा है। तो मुझे अिस समय लगा कि अब हम बड़ा काम करने जा रहे हैं और सारी शक्ति अुसमें केन्द्रित किये बगैर काम होनेवाला नहीं है, अिसलिअे अिस विषयकी ओर लोगोंका ध्यान फिरसे खींचना चाहिये।

### सर्व-सेवा-केन्द्रमें ही सब काम हों

जयप्रकाशजीने भी अेक दफा अिस बातका जिक्र किया कि सबका अेक संघ बन जाय तो अच्छा रहेगा। ये सब अलग-अलग रह जाते हैं, तो अुसमें से ताकत निर्माण नहीं होगी। यह अिशारा अेक सुहृद और मित्रके नाते अुन्होंने किया। और मुझे यह कहनेमें खुशी होती है कि अुसके बारेमें गंभीरतासे सोचा जा रहा है। सर्व-सेवा-संघ अेकरूप बनेगा और जो मुख्य-मुख्य संघ हैं, वे अुसमें विलीन हो जायंगे। अतः वह निर्णय जब होगा, तब लोगोंके सामने आयेगा। मैं तो मानता हूं कि यह दोष छोटे-छोटे कार्यकर्ताओंका नहीं है, बल्कि जो मुख्य कार्यकर्ता हैं अुन्हींका है। क्योंकि अुन्होंने जो अेक रास्ता बनाया अुसी पर दूसरे जाते हैं। अगर रास्ता अैसा बनाया होता कि जहां भी कोअी काम शुरू होता है, वह सर्व-सेवा-संघका ही होता है और सर्व दृष्टिसे ही वह काम होगा, यानी सर्व-सेवा ही वह होगी। अिसलिअे कहीं भी सिर्फ कताओं-मंडल स्थापित नहीं होगा, बल्कि सर्व-सेवा-केन्द्र ही होगा। अुसमें कताअी भी चलेगा, ग्राम-अुद्योग भी चलेगा, नयी तालीम भी चलेगी, हरिजन-सेवा भी चलेगी अर्थात् जो कार्यकर्ता वहां होगा, अुसकी शक्ति और वृत्तिके अनुसार किसी काम पर अधिक जोर पड़ेगा तो किसी पर कम। अिसलिअे वह वहांके कार्यकर्ता, वहांकी परिस्थिति, मांग आदि पर निर्भर रहेगा। फिर भी जो केन्द्र खुलेगा, वह सर्व-सेवा-केन्द्र ही होगा। अिसलिअे यह विचार किया जा रहा है और वह दोष मिट जायगा, अैसा मुझे लगता है। लेकिन मुझे लगा कि अिस ओर कार्यकर्ताओंका ध्यान खींचूं और वे सर्वांगी दृष्टि रखकर मिलजुलकर काम पूरा करें, तो अच्छा रहेगा। नहीं तो आज जो चलता है, वह चंद दिनों तक चलेगा और बादमें साराका सारा खतम हो जायगा।

### प्रार्थना दिलकी गहराअीसे हो

अिसके अलावा, आखिरमें अेक और बात। बहुत निरीक्षण करने पर मैं अिस नतीजे पर आया हूं कि हम रोज सुबह-शाम जो प्रार्थना करते हैं, वह गहरी नहीं होती। मैंने बहुतसी संस्थाओंमें देखा है कि वह अेक सदाचार या शिष्टाचारके तौर पर चलती है। सदाचार अच्छा है, लेकिन केवल सदाचारके तौर पर वह चलेगी, तो अुससे वह अनुभव नहीं आयेगा, जो सच्चे दिलसे की हुअी प्रार्थनासे आता है। बापूने अिस बारेमें अपने जीवन और मरणसे हमें बहुत शिक्षण दिया है। आखिरमें भी जब वे गये, तब प्रार्थनाके अुत्साहमें थे और प्रार्थनामय होकर ही अुन्होंने अपना देह-परित्याग किया। और जहां वह गोली अुनके शरीर पर लगी कि वैसे ही अुन्होंने परमेश्वरका नाम लिया। यह कोअी छोटी बात नहीं है। वे निरंतर जाग्रत रहते थे और दो दफा जो प्रार्थना करते थे, वह केवल सदाचारके तौर पर नहीं, बल्कि अुसमें अपना हृदय रखते थे। वे तो कहते थे कि हर सांसके साथ मेरी प्रार्थना चला करती है। और वह केवल अहंकार या कल्पना नहीं थी, बल्कि अुनके जीवनकी अेक मुख्य वस्तु थी। अतः हम जो प्रार्थना करते हैं, वह शिष्टाचार तो होता है, लेकिन अुसकी गहराअीमें हम नहीं जाते। यहीं देखिये ना। यहां हमने खानेके लिअे कितना अिंतजाम किया? सारा तालीमी संघका मंडल, आशादेवी और बिहारके तमाम लोग अुसमें लगे, तब हमको खाना मिला।

www.vinoba.in

अितना आयोजन हमने खानेके लिअे किया। लेकिन प्रार्थनाके लिअे हमने कितना आयोजन किया? कितना चिंतन किया? हमने प्रार्थना तो की, लेकिन अुसके लिअे हमें कोअी खास बात करनी पड़ी हो, अैसा नहीं है।

अब प्रार्थना अैसी वस्तु है कि अुसके लिअे बाहरका कोअी खास काम करना भी नहीं पड़ता। जो करना पड़ता है, वह अंदरसे होता है और वह अेक क्षणमें हो जाता है। अुसके लिअे ज्यादा समय भी नहीं देना पड़ता। अिसलिअे अितना अगर हम करें, तो अुससे हमें बल मिलेगा। और जैसे-जैसे हम अेक-अेक कठिन काम अुठाते जा रहे हैं, वैसे-वैसे सिवाय परमेश्वरके आधारके, अुनकी पूर्तिके लिअे हममें क्या ताकत होगी, हम नहीं देखते। अगर अीश्वरका आधार सच्चे दिलसे हम नहीं रखते, तो यह हो नहीं सकता कि सत्यादि धर्मों पर हम अविचल कायम रह सकें।

**नीति-धर्मकी प्रेरणा : अंतःसमाधान**

शंकररावजीने कल जिक्र किया था कि "हम जो काम करते हैं, वह अिहलोकके लिअे यानी यहांके प्रत्यक्ष अनुभवके लिअे करते हैं। और पुराने जमानेमें जो यात्रा तथा यज्ञ अित्यादि होते थे, अुसमें वे परलोकका खयाल करते थे।" अतः हमारे काममें और अुनके काममें यह फरक है। यह फरक तो अुन्होंने ठीक बताया, लेकिन सोचनेकी बात है कि परलोकका नाम क्यों लिया जाता है? अिसलिअे लिया जाता है कि जब अेक व्यक्तिको हम कहते हैं कि तुझे सत्य पर अविचल रहना चाहिये और अुसमें तुझे नुकसान नहीं होगा, बल्कि लाभ ही होगा, तो अुसके जवाबमें वह कहता है कि फलाने मौके पर वह सत्य बोलता है तो अुसका नाश होता है, और असत्य बोलता है तो बच जाता है। अब आप अुसको क्या कहेंगे? अुस हालतमें भी असत्य नहीं बोलना चाहिये। देशके हितके लिअे, प्राणोंके बचावके लिअे भी असत्य नहीं बोलना चाहिये। अिस तरह जो अविचल सत्यनिष्ठा मानना चाहते हैं, वे अुसके लिअे क्या आधार बतायेंगे? अतः जिन्होंने अेक दूसरे ढंगसे सोचा था, अुन्होंने परलोकका आधार बताया कि भाअी, असत्य बोलोगे तो चाहे अिस दुनियामें लाभ होता हुआ दिखे, लेकिन परलोकमें लाभ नहीं होगा। और वह परलोक हो कायमका है। यह दुनिया तो चन्द दिनोंकी है। अिसलिअे चंद दिनोंका लाभ देखकर कायमका लाभ नहीं छोड़ना चाहिये। वह अेक बाल-भाषा थी, बाल-भाषा यानी अविकसित भाषा। अगर विकसित भाषामें बोलना है, तो यह कहना चाहिये कि अगर हम असत्य बोलते हैं तो अंतःसमाधान नहीं हो सकता। और अंतःसमाधानकी कल्पना समझना या समझाना जहां कठिन हो जाता है, वहां परलोककी यानी मृत्युके बादके जीवनकी भाषा काममें लायी जाती है। अिसलिअे चाहे आप अंतःसमाधानका आधार रखो, चाहे परलोककी जिंदगीका नाम लो, हर हालतमें सत्यादि नीति-धर्मों पर अविचल कायम रहना है, यह मुख्य वस्तु है। और अिसकी सिद्धिके लिअे तथा प्रेरणाके तौर पर परलोकका, आत्मकल्याणका या अंतःसमाधानका नाम लिया जा सकता है। अिसलिअे जिसकी भूमिकाका जितना विचार हुआ होगा, अुसके अनुसार वह सत्यका अुपयोग करेगा। अतः हम यह जरूर समझते हैं कि सत्यादि नीति-धर्मके अविचलित पालनके लिअे अंतःसमाधानसे बढ़कर दूसरी कोअी प्रेरणा अच्छी नहीं हो सकती। पर जिन्होंने परलोक आदिका आधार लिया था, अुन्होंने कोअी गलत काम नहीं किया था; क्योंकि अुनका हेतु अविचलित सत्यनिष्ठा कायम रहे, यही था। यह तो मैंने सहज अेक बात प्रसंगसे कह दी। लेकिन मेरा कहना यह है कि अगर हम अपने धर्मों पर अविचलित रहना चाहते हैं और अुससे दुनियामें हंसी होती हुअी दीख पड़े तो भी अुसको छोड़ना नहीं चाहते, तो हमें गहरे आधारकी जरूरत होगी। अिसमें अीश्वरकी प्रार्थना जो मदद दे सकती है, वह और किसी तरहसे नहीं मिल सकती। अिसलिअे मैं चाहता हूं कि हमारे सारे कामोंका आधार हम परमेश्वर-निष्ठामें रखें और जो प्रार्थना हम करते हैं, अुसमें अधिक जान डालें, हमारा दिल अुसमें रखें।

**सालभर काम करनेवालोंकी जरूरत है**

अब आखिरमें दो ही शब्द कहने हैं। अगले साल हम जो काम करने जा रहे हैं, अुसके लिअे कम-से-कम अेक साल पूरा समय देनेवाले लोग चाहियें। जो लोग तैयार हों, वे अपना नाम सर्व-सेवा-संघके पास भेज देंगे, तो अुनको महीना दो महीना तालीम देनेकी व्यवस्था की जायगी और अुनकी सेवाका भी अुपयोग किया जायगा। अिसलिअे जो आना चाहते हैं, वे अपना नाम दे दें।

## कुछ बुनियादी विचार-दोष

[श्री रेने फुलप-मिलरके भाषणका अेक हिस्सा 'हरिजनसेवक' के ४–४–'५३ के अंकमें दिया जा चुका है। यह अुसका दूसरा हिस्सा है। पहले हिस्सेमें हम देख चुके हैं कि मार्क्सवादमें ही नहीं, लोकशाहीमें भी समाजकी मानवताका नाश करनेकी प्रवृत्ति रही है और अुसने मानव-जीवनके सच्चे ध्येयको विकृत किया है। अिसका कारण है मनुष्यकी प्रगतिके अिन दोनों सिद्धान्तोंमें पाये जानेवाले कुछ बुनियादी विचार-दोष। प्रस्तुत हिस्सेमें अिन विचार-दोषोंकी समालोचना की गयी है।

२९–१–'५३ —म० प्र०]

यदि हम ज्यादा हेतुपूर्ण जीवन प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें अपनी स्थितिकी फिरसे जांच करनी चाहिये और अपने कुछ विचार-दोषोंको सुधार लेना चाहिये।

अपने अिन विचार-दोषोंका मूल समझनेके लिअे पहले हम अिन विचारोंके विकास-क्रमको अेक बार देख डालें। अैसा करनेमें हमारा अुद्देश्य लोकशाहीके सिद्धान्तकी प्रतिष्ठा कम करना नहीं, बल्कि अुसकी जांच करना और अुसके अूपर मानवताके नाशकारी तत्त्वोंकी जो काअी चढ़ गयी है, अुससे लोकशाहीमें निहित शुद्ध मानवतावादी आदर्शोंको मुक्त करना है। अिस सिलसिलेमें हमें विचारोंकी अुस विकास-प्रक्रियाकी भी पड़ताल करनी पड़ेगी, जिसने हमें मौजूदा जिचकी स्थितिमें ला पटका है।

अीसाअी धर्म, जिसकी परम्पराओंको लोकशाहीके संस्थापकोंने अमेरिकामें जमाया, मनुष्यको अीश्वरका सिरजा हुआ जीव मानता है, अैसा जीव जिसका अपना अनन्य व्यक्तित्व है। जागरण-काल (enlightenment) में अिस धर्म-विचारका अैहिक दृष्टिसे नया अर्थ अवश्य किया गया, लेकिन अीसाअी धर्मका नैतिक और सामाजिक पाया — व्यक्तिके अनन्य व्यक्तित्वके प्रति आदरकी भावना — बदस्तूर कायम रहा। वस्तुतः व्यक्तिके प्रति आदरकी भावना दैवी या मानवतावादी व्यवस्थाका बुनियादी आदर्श था, जिसमें मनुष्यके सुखका आदर्श अंतिम मूल्योंके साथ अनिवार्य रीतिसे संयुक्त रहा।

अिसमें बड़ा परिवर्तन तब हुआ, जब अेडम स्मिथ और जरमी बेन्थाम जैसे अर्थशास्त्रियोंके प्रभावमें सनातन मूल्यों पर आश्रित सुख और मानवीय संबंधोंकी अेकरागताके विचारकी जगह केवल आर्थिक सलामती या तथाकथित आर्थिक सुमेलकी प्रतिष्ठा हुअी। क्योंकि बहुत ही जल्दी यह स्पष्ट हो गया कि यदि सामाजिक जीवनको भौतिक स्वार्थोंका ही खेल माना जाय — विशेष कुछ नहीं, तो सामाजिक जीवन भी हितों और स्वार्थोंकी व्यवस्थाके सिवा और कुछ नहीं है। अिस दृष्टिके फलस्वरूप राज्य कच्चा

www.vinoba.in

माल हासिल करनेवाला और अुससे जरूरी पक्का माल बनानेवाला अेक मंडल, खेती तथा पक्के मालका अुत्पादन करनेवाली शक्तियोंका जोड़ बन गया।

अिस आर्थिक प्रधानताके प्रभावमें व्यक्तिकी पवित्रताका क्या हाल हुआ? पहला परिणाम तो यह हुआ कि मनुष्यकी अनेकविध अुत्पादन-शक्तिको अुसकी आर्थिक प्रवृत्तियोंके संकरे घेरेमें मर्यादित किया गया। भौतिक सुखकी लालसाने बौद्धिक और नैतिक संतोषकी चाहको निकाल भगाया। भौतिक समृद्धि ही सुख बन गयी। बेन्थामके अुपयोगितावादके सिद्धान्तने मानवी मूल्योंकी अिस अवनतिको पराकाष्ठा पर पहुंचा दिया। अिस सिद्धान्तने अुपयोगिताको ही सब मूल्योंकी कसौटी बना दिया। बेन्थामके अिस सिद्धान्तका अमेरिकाकी विचारधारा पर प्रेसीडेन्ट जैकसनके समयसे ही बहुत ज्यादा, परंतु बड़ा दुःखद असर होता आया है।

अुपयोगितावादी अुद्देश्योंके जम जानेसे सारे बौद्धिक और आध्यात्मिक मूल्योंको देखनेमें हमारी दृष्टि असमर्थ हो गयी। और अन्तमें मनुष्य तथा समाज दोनों आर्थिक शक्तियोंकी प्रभुताके अधीन हो गये। मनुष्यकी सजीव वास्तविकता आर्थिक संख्यामें बदल गयी। आर्थिक नियमोंको कुदरती सिद्धान्तोंका महत्त्व मिल गया, जिसका फल यह हुआ कि बेन्थामके 'अधिकतम संख्या' के नियमको न्यूटनके गुरुत्वाकर्षणके सिद्धान्तका सार्वत्रिक महत्त्व प्राप्त हो गया। अुदार पूंजीवादके अर्थशास्त्रियोंने चाहे अमीरोंके पक्षका समर्थन किया हो चाहे गरीबोंके, अुनकी प्रवृत्तिने हरअेक मानुषिक और सजीव वस्तुको नाप-तौल तथा गिनतीवाली जड़ चीजका रूप दे दिया।

अब हम मार्क्सके समाजवादके मूलकी जांच करें। हमारे जमानेमें अपने हीन रूपमें वह साम्यवादके नामसे पहचाना जाता है। मार्क्स भी मानव-व्यक्तित्वकी आदर्श कल्पनासे ही शुरू करता है। अुसने सभी धार्मिक मान्यताओंकी निन्दा की है, फिर भी अपने विचारोंकी अिमारत अुसने मानवके गौरवके धार्मिक भावनावाली कल्पनाके रूपान्तर पर खड़ी की थी। मानवके लिअे अपनी सच्ची सहानुभूतिके कारण मार्क्सने हेगेलके 'विश्वात्मा' (वर्ल्ड स्पिरिट) के तात्त्विक विचारको छोड़ दिया और लुडविग फ्यूरबैकके दर्शनको अपनाया। यह दर्शन व्यक्तिको केन्द्र मानकर चलता है। फ्यूरबैकके प्रभावके कारण मार्क्सको अपने अिस प्रसिद्ध सूत्रका प्रतिपादन करनेकी प्रेरणा मिली थी कि 'मनुष्यका मूल स्वयं मनुष्य ही है।'

मानव-जातिके प्रति अुसकी प्रबल करुणाने ही मार्क्सको सामाजिक क्रान्तिकारी बनाया था। जब वह युवक था, तभी अुसने औद्योगिक युगके पूंजीवादके खिलाफ विद्रोहकी आवाज अुठाअी थी, क्योंकि पूंजीवाद मनुष्यको मनुष्य न मानकर अेक काम करनेवाला पुर्जा मानता था और अिस मानवताके नाशकी प्रवृत्तिमें वृद्धि करता था। युवक मार्क्सकी मानवतावादी प्रवृत्तियां अुसकी आरंभिक रचनाओंमें बहुत स्पष्टरूपसे प्रगट हुअी हैं। मेरिंग, अेडलर, मेयर और हिलफर्डिंग अुसकी अिन रचनाओंको प्रकाशमें लाये हैं। अिन रचनाओंमें मार्क्सने साम्यवाद पर भी तीव्र आक्षेप किये हैं, क्योंकि अुसे तब अैसा महसूस होता था कि "साम्यवादी समाज भी पूंजीवादी समाजका ही व्यापक रूप है। कारण, साम्यवादमें अर्थनीतिकी सत्ता खतम नहीं होती। अुलटे, वह समाज पर अपनी पूरी प्रभुता जमाती है और अिस तरह मनुष्यके वैयक्तिक मूल्यका संपूर्ण नाश करती है।"

मार्क्सके अिस मूल विचारमें जो मानव-प्रेमकी आग थी, अुसे किस चीजने बुझा दिया? क्या बात हुअी कि मार्क्स, जिसे साम्यवादकी खामियोंकी अितनी स्पष्ट पकड़ थी, अुसी रास्ते गया जिसने आगे जाकर मनुष्यकी मनुष्यताके संपूर्ण नाशका रास्ता खोल दिया? जहां तक मैं समझ पाया हूं, मार्क्सके अिस रुख-परिवर्तनकी जड़में मनुष्यके विषयमें रही वह जड़वादी कल्पना है, जिससे १९ वीं सदीके अधिकांश जड़वादी विचार दूषित थे।

अुदाहरणके लिअे, हम देखें कि जिसे फ्यूरबैक 'वास्तविक मनुष्य' कहता था, अुसके विषयमें अुसकी कल्पना क्या थी। अुसकी अिस कल्पनामें मनुष्यके केवल भौतिक पहलूका खयाल किया गया है, आध्यात्मिक पहलूको बिलकुल छोड़ दिया गया है। फ्यूरबैक कहता था, "मनुष्य जो खाता है, वही अुसका स्वरूप है।" साफ है कि फ्यूरबैकका मनुष्य, मनुष्यका अेक बहुत छोटा अंशमात्र है, और जब मार्क्सने हेगेलको छोड़कर फ्यूरबैकको पकड़ा, तो अेक अयथार्थ कल्पनाको छोड़कर दूसरी अुतनी ही अयथार्थ कल्पनाको ग्रहण कर लिया। फर्क अितना ही था कि पहली कल्पना आदर्शवादी थी और दूसरी भौतिकवादी। अिसके बाद जब अुसने अपने जमानेके आर्थिक प्रवाहका अनुगमन करते हुअे मनुष्यके विषयमें फ्यूरबैककी कल्पनाकी जगह अपनी यह कल्पना चलायी कि मनुष्यका स्वरूप तो अुसकी परिस्थितियोंमें मिलता है, तब गोया वह अिस गलत दिशामें अेक कदम और बढ़ गया। कहनेकी जरूरत नहीं कि परिस्थितियोंसे अुसका मतलब भौतिक और आर्थिक परिस्थितियोंसे ही था। अिस तरह दूसरी दिशासे सही, पर मार्क्स भी आखिर मनुष्यके आर्थिक पहलू पर जोर देनेवाली अुसी कल्पना पर आ गया, जिसकी अुसने पहले आलोचना की थी। वह जीवनके आर्थिक पहलुओंको ही अन्तिम सत्य मानने लगा। आखिरमें तो अुसने मनुष्यको अितना कृत्रिम रूप दिया कि मनुष्य अुसके लिअे कामके घंटोंके रूपमें ही रह गया। जो किसी समय मानवतावादी था, वह कहने लगा कि "समय ही सब कुछ है, मनुष्यकी कोअी गिनती नहीं। बहुत मानें तो वह समयका मूर्त रूप है। गुणकी कोअी कीमत नहीं, संख्या ही मूल चीज है, अुसीसे सब बनता है।"

व्यक्तिकी तरह मनुष्यका मूल्य छोड़नेके लिअे कहा गया। मानवताकी सारी व्यक्त क्रियाओंके विभिन्न वर्गोंके आर्थिक स्वार्थोंके अिशारे पर चलनेकी बारी आयी। अैसे सारे मूल्योंका, जो आर्थिक नहीं थे, त्याग कर दिया गया।

अब हम बोलशेविकों द्वारा मानवताके नाशका सोवियट अितिहास पर कितना असर हुआ, यह देखें। पहले यह देखिये कि 'मनुष्यका मूल मनुष्य खुद ही है' — मार्क्सके अिस मानवतावादी सूत्रका क्या हुआ? मार्क्सवादका सोवियट राज्यमें जो रूपान्तर हुआ, अुसके अनुसार मनुष्यका मूल व्यक्तिरूप मनुष्य नहीं समुदायरूप मनुष्य हो गया। और व्यक्तिरूप मनुष्यको समुदायरूप मनुष्यमें बदलनेके लिअे यह आवश्यक हुआ कि अुसकी व्यक्तिगत आत्माका, जो कि अुसके अनन्य व्यक्तित्वका स्रोत है, नाश कर दिया जाय। व्यक्तिगत विचार, अनुभूति और निर्णयका कोअी स्थान नहीं रह गया, अुनकी कोअी जरूरत नहीं रह गअी। मनुष्यको कहा गया कि वह अपने व्यक्तित्वका त्याग कर दे, जिससे अुसे आसानीके साथ समाजके यंत्रके पुर्जेका, अुसके अेक अिच्छानुसार बदले जा सकनेवाले स्क्रूका रूप दिया जा सके। जिस तरह बहुतसे पुर्जोंको जोड़कर यंत्र तैयार किया जाता है, अुसी तरह व्यक्तियोंको जड़ पुर्जोंकी भांति जोड़कर अेक अैसा यांत्रिक संघटन तैयार करना, जो सामुदायिकताके नियमोंके अनुसार चले और अिस तरह सामुदायिक सुखकी सिद्धि करे, अुनका अन्तिम लक्ष्य हो गया।

अिस तरह हम देखते हैं कि मानवताका नाश अेक प्रकारका संक्रामक जहर है, जो दोनों पक्षोंमें प्रवेश कर गया है, यद्यपि पश्चिमकी अपेक्षा अुसका जोर पूर्व* में अधिक दिखता है।

(अंग्रेजीसे)

* पूर्व युरोप — रूस — संपा०

www.vinoba.in

# हरिजनसेवक

१३ जून १९५३


## 'सूक्ष्म भौतिक लोभकी दोषी'

भारतकी ओसाओी संस्थाओंके पदाधिकारियोंने अेक संयुक्त वक्तव्य जाहिर करके हाल हीमें संसद्में डॉ० काटजूने विदेशी धर्मप्रचारकोंके कार्यकी जो आलोचना की थी अुसके खिलाफ अपना विरोध बताया है और गहरी चिन्ता प्रगट की है। डॉ० काटजूने कहा था कि अिन लोगोंको अब भारतमें अपना तथाकथित धर्म-प्रचारका काम छोड़ देना चाहिये। ओसाओी पदाधिकारियोंके अिस संयुक्त वक्तव्यमें दिये गये अुत्तरका सार यह है कि विदेशकी अिन मिशन-संस्थाओंने भारतमें मानव-सेवाका जाने कितना काम किया है और हमें अिसके लिअे अुनका अहसान मानना चाहिये। दूसरी बात यह कि राजनीतिक दृष्टिसे भी अब अिन संस्थाओं पर कोओी आक्षेप नहीं किया जा सकता, क्योंकि "पिछले कुछ वर्षोंमें सारा अधिकार हिन्दुस्तानी चर्चके हाथों सौंप दिया गया है और ज़ारी धन-सम्पत्ति भी अुसीको सौंप देनेकी कार्रवाओी की जा रही है।"

लेकिन अिसके सिवा अुनके जवाबका मुख्य मुद्दा यह है कि "अैसी गैरवाजिब मांग तो सब धर्मोंके प्रचार-कामकी रीढ़ पर ही प्रहार करती है।" मुझे भी लगता है कि वह प्रचार-कामकी रीढ़ पर प्रहार करती है, किन्तु मांग गैरवाजिब नहीं, अुसका आधार बहुत सही, विहित और वाजिब है। मुझे यह कहते हुअे खेद होता है कि जिन लोगोंने अिस वक्तव्य पर सही की है तथा जिन्होंने गृहमंत्रीके अुस सुचिन्तित कथनके विरोधमें समाचार-पत्रोंमें अपना विरोध प्रगट किया है, अुन्होंने अुस कथनका गहरा मर्म समझा ही नहीं है।

अगर हम धर्म-परिवर्तन, तबलीग़, तनज़ीम आदि सवालों पर गांधीजीने जो कुछ लिखा और कहा था अुसे देखें, तो मालूम होगा कि डॉ० काटजूने जो कुछ कहा है, वह गांधीजीने "क्रिश्चियन मिशन्स — देअर प्लेस अिन अिंडिया" में जो बात बार-बार कही है, अुसीका दूसरे शब्दोंमें किया हुआ वर्णन है। गांधीजीके अुन लेखोंको पढ़ने पर हमें यह भी मालूम होगा कि आध्यात्मिक वस्तुके प्रचारके लिअे मिशन-संस्थाअें बनाकर अुस कामको संस्थागत करनेके लिअे गांधीजी अुन्हें 'सूक्ष्म भौतिक लोभकी दोषी' मानते थे। क्या अिस तरह संस्थाओंके जरिये धर्म-प्रचार करना दुनयवी और भौतिक चीज नहीं है? अैसा संस्थागत प्रचार मनुष्यको सच्चे धर्मका ज्ञान देकर अुसका हृदय-परिवर्तन नहीं कर सकता, महज लोगोंके धर्म-परिवर्तनका ही काम कर सकता है। और कौन अैसा हिम्मतवाला है जो कहे कि अिन संस्थाओंकी नजर धर्म-परिवर्तन पर नहीं थी? हृदय-परिवर्तन तो आत्माकी बात है और आत्माके कार्यकी पद्धति अलग तरहकी होती है, अुसके लिअे अस्पताल, दवाखाने, कॉलेज, स्कूल, कुष्ठ-रोगियोंके आश्रम आदि दुनयवी तथा भौतिक सहायताओं और प्रलोभनोंकी जरूरत नहीं होती। जिस तरह गुलाबके फूलको अपनी सुगन्धका प्रसार करनेकी जरूरत नहीं होती, ज्ञानका प्रकाश पायी हुओी आत्माका भी वैसा ही है। धर्म आध्यात्मिक वस्तु है, श्रद्धाका विषय है; वह शाब्दिक प्रचारकी चीज नहीं है। और न अुसके लिअे मानव-सेवाके कार्योंके प्रलोभनकी जरूरत है। अुसका आचरण और अुसकी शोध अन्तरकी गहराओीमें होना चाहिये। अैसा हो तो समानधर्मी व्यक्तियों पर अुसका सहज ही प्रबल और अनिवार्य प्रभाव पड़ता है। बाकी तो सब आत्माको संताप देनेवाला ही होता है।

यहां मैं ओसाओी मिशन-संस्थाओंके अितिहासमें नहीं जाअूंगा। लेकिन तब भी यह नहीं भूलना चाहिये कि अुनका प्रवेश हमारे देशमें १५ वीं शताब्दीके बाद युरोपके देशोंने बाहरी देशोंमें अपने अुपनिवेश कायम करनेका जो प्रयत्न चलाया अुसके सिलसिलेमें अुनकी सहायताके लिअे ही हुआ था, आरंभकालके अुन ओसाअियोंकी तरह नहीं, जो तलवार या बंदूकका आश्रय लिये बिना ही अपने धर्मकी घोषणा करनेके लिअे निकल पड़े थे। हमारा सौभाग्य है कि यह प्रकरण अब बीते अितिहासकी चीज बन गया है और हम आजाद हो गये हैं। आजादीने हमें अेक राष्ट्रकी तरह हिल-मिलकर रहनेकी सुविधा दी है। अपने-अपने विश्वासके अनुसार स्वतंत्रतापूर्वक धर्मका पालन करते हुअे हम भाओी-बहनोंकी तरह रहें। कोओी अपने धर्मको किसी दूसरे धर्मसे बड़ा न कहे, अुसका अभिमान न करे, दूसरे धर्मोंके प्रति हम महज सहिष्णुताका भाव ही नहीं रखें, बल्कि यह स्वीकारें कि बुनियादी तौर पर सारे धर्म समान हैं।

और डॉ० काटजूके निवेदनमें निहित यही भाव अुनके विरोधियोंकी समझमें नहीं आया है। असांप्रदायिक राज्य यह बात नहीं मान सकता कि कोओी अेक धर्म किसी दूसरे धर्मसे बढ़कर है, लेकिन धर्म-परिवर्तन करनेके लिअे किये गये धर्म-प्रचारके कार्यमें, वह प्रगट हो या अप्रगट, यह बात निहित है। और सचमुच बड़प्पनका अैसा दावा किया भी नहीं जा सकता, क्योंकि अीमानदारीके साथ जीवनमें अुतारा हुआ कोओी भी धर्म अीश्वरकी प्राप्तिका मार्ग है और किसी धर्म या विश्वासके विषयमें यह दावा नहीं किया जा सकता कि वह सम्पूर्ण सत्य है या अपूर्व है या कि अुसमें किसी तरहकी कमी नहीं है। आत्मा तो अनुभवका विषय है, किसी विश्वास या मान्यताका नहीं। भारतके धार्मिक अनुभवकी अिस अपूर्व शोधमें गहरा सामाजिक और मानवीय अर्थ भरा पड़ा है तथा भारतमें रहनेवाले विविध सम्प्रदायोंको अुसका महत्त्व समझ लेना चाहिये। सच पूछो तो हमारे असाम्प्रदायिक राज्यका आधार ही यही है। असांप्रदायिकता किसी धर्मका निषेध नहीं है, वह अिस आध्यात्मिक सिद्धान्तका स्वीकार है कि हरअेकको अपने-अपने धर्मके आचरणका, यहां तक कि अुसे अपने लिअे अद्वितीय मानने तकका अधिकार है, लेकिन कोओी यह दावा नहीं कर सकता कि अुसका धर्म अमुक किताबका है या अमुक पैगम्बरसे पाया हुआ है, अिसलिअे किसी दूसरे धर्मसे ज्यादा अच्छा है। सच्ची आध्यात्मिकताका पहला लक्षण नम्रता है।

अिस लेखका अुपसंहार मैं श्री राजगोपालाचार्यके अभी कुछ दिन पहले पटना विश्वविद्यालयमें दिये गये भाषणके अेक अुद्धरणसे करूंगा। अिसी विषयकी चर्चा करते हुअे अुन्होंने कहा, "गीता हमें विधायक तत्त्वज्ञान सिखाती है। वह कहती है कि सारे मार्ग अुसी अेक लक्ष्यकी ओर ले जाते हैं। धार्मिक अुदारताका यह अेक विधायक सिद्धान्त है। सब धर्म सहिष्णुताकी शिक्षा देते हैं, लेकिन कोओी यह नहीं कहता कि लक्ष्य भी अेक ही है चाहे रास्ते विविध हों। हिन्दू तत्त्वज्ञानमें दूसरोंकी त्रुटियोंके प्रति केवल सहिष्णुता रखनेकी ही बात नहीं है, बल्कि सबका समान लक्ष्य स्वीकार किया गया है। हम लोगोंको सिखाया जाता है कि कोओी हिन्दू दूसरोंके देवताओंका अिनकार नहीं कर सकता। अिस तत्त्वज्ञानका सामाजिक जीवनके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है और हमारे देशमें, जहां अनेक धर्मों और सम्प्रदायोंके लोग रहते हैं, अिस सिद्धान्तका, जो सहिष्णुताकी भावनासे भी आगे जाता है, बड़ा मूल्य है। मेरे मतानुसार तो वह हमारी महान विरासतका सर्वोज्ज्वल रत्न है।" ('हिन्दू', १३-५-'५३)

www.vinoba.in

ओश्वरको कृपासे अब हिन्दका ओीसाओी चर्च युरोपीय संस्कृति और अितिहासकी दासतासे मुक्त हो गया है, तो हम आशा करते हैं कि वह भारतीय राष्ट्रकी, जिसका वह खुद अेक महत्त्वपूर्ण अंग है, अिस विरासतका मूल्य समझेगा और अुसे अपनायेगा।

२०–५–'५३ **मगनभाओी देसाओी**

(अंग्रेजीसे)

## धर्म-परिवर्तन

[गांधीजीके साथ अेक चर्चा]

गांधीजीने अिस बात पर जोर दिया था कि संघका कोओी सदस्य गुप्तभावसे भी यह अिच्छा न करे कि कोओी अपना धर्म छोड़कर हमारे धर्ममें मिल जाय। अिस पर बहुत वाद-विवाद हुआ। गांधीजीने अपनी स्थिति पहलेसे और अधिक स्पष्ट करनेके लिअे कहा:

"मैं न सिर्फ दूसरेका धर्म-परिवर्तन करनेकी कोशिश न करूंगा, बल्कि मैं गुप्तभावसे भी यह नहीं चाहूंगा कि वह अपना धर्म छोड़कर मेरा धर्म स्वीकार करे। मेरी परमात्मासे हमेशा यही प्रार्थना होगी कि अिमाम साहब (गांधीजीके अेक पुराने मुसलमान साथी) अच्छे मुसलमान बनें या जितना अच्छा बन सकते हों बनें। अहिंसाके सन्देशसे युक्त हिन्दूधर्म मेरी दृष्टिमें सबसे सुन्दर, सबसे बड़ा और सबसे महिमामय धर्म है — जैसे कि मेरी दृष्टिमें मेरी धर्मपत्नी सबसे अधिक सुन्दर रमणी है — मगर दूसरोंको भी अपने धर्मके बारेमें वही गर्व हो सकता है। सच्चे और असल धर्म-परिवर्तनके अुदाहरण भी मिलना सम्भव हैं। अगर कुछ लोग अपने आन्तरिक संतोष और विकासके लिअे धर्म-परिवर्तन करना चाहें, तो वे भले ही करें। जंगलियों और आदिमनिवासियोंके पास अपने धर्मका सन्देश पहुंचानेका शौक मुझे नहीं है। कहा जाता है कि अत्यन्त नम्रतासे यह काम करो। खैर, मैंने महानम्रतामें भी औद्धत्यको छिपा हुआ पाया है। मैं जानता हूं कि अगर मैं सम्पूर्ण हूं, तो दूसरोंके पास भी मेरे विचार पहुंचेंगे ही। मेरी सारी शक्ति अुसी ध्येयकी ओर जानेमें खर्च हो जाती है, जो मैंने अपने लिअे निश्चित कर लिया है। अगर मैं अपने सच्चे स्वरूपमें, बाहरी आवरण छोड़कर, अुनके पास न जाअूं, तो आसामनिवासियों, आदिमनिवासियोंके पास और क्या लेकर जाअूंगा? अपनी प्रार्थनामें शामिल होनेको कहनेके बदले मैं ही अुनकी प्रार्थनामें शामिल हो जाअूंगा। अंग्रेजोंके आनेके पहले हम 'आदिमनिवासी', 'प्रकृति-पूजक' आदि भेदोंको नहीं जानते थे। यह भेद तो हमें अंग्रेजी शासकोंने सिखलाया है। मुझे सेवा करनेकी अिच्छा है और यह लोगोंके साथ मेरा ठीक सम्बन्ध बांध देगी। धर्म-परिवर्तन और सेवा, दोनोंका साथ ठीक-ठीक नहीं चलता।"

दूसरे दिन खूब सबेरे ये मित्र गांधीजीसे खानगी बातचीत करने बैठे। अिस बार भी कअियोंने वही सवाल पूछा:

"तब क्या आप चाहते हैं कि संघका यह नियम बन जाय कि जो लोग दूसरोंको अपने धर्ममें लानेके लिअे प्रचार करना चाहते हैं, वे अिसके सदस्य नहीं बन सकते?"

गांधीजीने कहा, "जाती तौर पर तो मैं यही ठीक समझता हूं। मैं अिसे संघ बनानेके बादका दूसरा ही कदम समझता हूं। भिन्न धर्मावलम्बियोंके पारस्परिक सम्पर्क और सम्बन्धके लिअे यह नियम आवश्यक है।"

अेक दूसरे मित्रने पूछा, "क्या धर्म-प्रचारकी अिच्छा परमात्माकी प्रेरणा नहीं है?"

गांधीजीने जवाब दिया, "मुझे अिसमें शंका है। कुछ हिन्दुओंका विश्वास है कि सभी अिच्छायें परमात्माकी प्रेरणा होती हैं, परन्तु अुसने हमें भले-बुरेको समझनेकी शक्ति और विवेक भी तो दिया है। भगवान तो कहेंगे कि मैंने तुम्हें बहुतसी प्राकृतिक स्फुरणायें दी हैं, ताकि प्रलोभनका सामना करनेकी तुम्हारी वृत्तिकी परीक्षा हो।"

अेक बहनने पूछा, "मगर आप आर्थिक संगठनके बारेमें अुपदेश देना तो जरूर ही भला समझते होंगे?"

"हां, अुसी प्रकार जिस प्रकार मैं स्वास्थ्यके नियमोंको बतलाना अच्छा समझता हूं।"

"तब यही नियम धार्मिक मामलोंमें भी क्यों न काममें लाया जाय?"

"यह सवाल ठीक है। मगर आप यह न भूलें कि हमने यह चर्चा अिस सिद्धान्तको मानकर शुरू की है कि सभी धर्म सच्चे हैं। अगर भिन्न-भिन्न समाजोंके लिअे भिन्न-भिन्न, परन्तु स्वास्थ्यके सच्चे नियम प्रचलित होते, तो मैं कुछको सही और कुछको गलत कहनेमें हिचकता। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि लोग जब तक दूसरोंके धार्मिक विचारोंको सहनेको तैयार नहीं होते, तब तक किसी किस्मका आन्तरराष्ट्रीय बन्धुत्व संघ हो ही नहीं सकता।

"फिर आध्यात्मिक विषयोंमें संस्कारिता या भौतिक दृष्टान्त भी बहुत दूर तक काममें नहीं लाये जा सकते। जब आप बाह्य प्रकृतिसे कोओी दृष्टान्त चुनते हैं, तब अुसका अुपयोग भी किसी खास हद तक ही हो सकता है। मगर मैं अेक प्राकृतिक अुदाहरण लेकर ही अपनी बात समझानेकी कोशिश करूंगा। अगर मैं आपको गुलाबका अेक फूल दूं, तो अुसके लिअे मुझे अपना हाथ हिलाना ही पड़ता है, मगर अुसकी सुगन्ध देनेके लिअे मुझे कुछ नहीं करना पड़ता, वह अपने-आप ही आपके पास पहुंच जाती है। हम अेक कदम और आगे बढ़ें, तो समझ सकेंगे कि आध्यात्मिक अनुभवोंका असर अपने आप ही होने लगता है। अिसलिअे स्वच्छता आदि नियम सिखलानेका दृष्टान्त यहां काम नहीं देगा। अगर हमें आध्यात्मिक ज्ञान है, तो वह अपने-आप ही दूसरों तक पहुंच जायगा। आप आध्यात्मिक अनुभवोंके परमानन्दकी बात करते हैं और कहते हैं कि अुसमें दूसरोंको भी हिस्सा दिये बिना रह ही नहीं सकते। खैर, अगर यह सच्चा आनन्द है, परमानन्द है, तो वह अपने-आप बिना बोले ही फैल जायगा। आध्यात्मिक मामलोंमें हमें रास्तेसे महज जरासा हट जाना पड़ता है। परमात्माको अपना काम करने दीजिये। अगर हम बीचमें हस्तक्षेप करते हैं, तो अुससे हानि भी हो सकती है। परमात्माका असर तो अपने-आप ही हुआ करता है। पापको अपना पैर नहीं होता, पर पुण्यको होता है। पाप तो केवल 'नास्ति' भर है। अुसे पहले पुण्यका भेस मिलना चाहिये, तब कहीं वह आगे बढ़ सकता है।"

"खुद अीसाने क्या लोगोंको सिखलाया और अुपदेश नहीं दिया था?"

"यहां बहुत बड़ी सावधानी चाहिये। आप चाहते हैं कि मैं बतलाअूं कि अीसाके जीवनका मैं क्या स्वरूप समझता हूं। खैर, मैं अितना तो कहूंगा कि बाअिबिलमें लिखे हरअेक शब्दको मैं अैतिहासिक सत्य नहीं मानता। फिर यह भी याद रखना चाहिये कि वे अपने देशबन्धुओंके बीच काम कर रहे थे। वे नाश करनेके लिअे नहीं, बल्कि बढ़ाने और पूर्ण करनेके लिअे आये थे। मैं गिरिशिखरके अुपदेश और पालके पत्रोंमें बहुत अन्तर मानता हूं। पालके पत्र तो अीसाकी शिक्षाओंमें अूपरसे मिलाये गये हैं — वे पालकी कृति हैं, अीसाकी नहीं।*

('हिन्दी नवजीवन', २६–१–'२८)

* सन् १९२८ में अहमदाबादमें हुओी आन्तरराष्ट्रीय बंधुत्व संघकी बैठकके कामकी श्री महादेवभाओी देसाओी द्वारा तैयार की हुओी रिपोर्टमें से। देखिये गांधीजीकी पुस्तक 'क्रिश्चियन मिशन्स — देअर प्लेस अिन अिण्डिया', नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – ९

www.vinoba.in

## पूंजीवाद और ट्रेड-यूनियनवाद

श्री खंडूभाओ देसाओने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी 'अिकानॉमिक रिव्यू' — आर्थिक पत्रिकामें लिखते हुअे मजदूरोंसे अनुरोध किया है कि वे पूंजीपतियोंकी लूटमें हिस्सेदार न बनें। लेकिन जब वे मजदूरोंकी तरह नौकरी करते हैं, तो जो लोग अुन्हें काम पर लगाते हैं — वह राज्य हो या खानगी पूंजीपति हों — अुनके साथ वे अिस लूटके भागी बनते ही हैं। अगर वे अैसा न करें, तो अुन्हें काम-धन्धा नहीं मिलेगा, मजदूरी नहीं मिलेगी जिससे जिन्दगी बुरी तरह बसर करना भी अुनके लिअे गैरमुमकिन हो जायगा। अिसलिअे अुनसे यह कहना कि वे पूंजीपतियोंकी मदद न करें बेकार है, बिलकुल निरर्थक है, क्योंकि तब अुन्हें यह भी समझाना होगा कि नौकरीकी यह सारी पद्धति ही लूटकी पद्धति है। हमें मूल पर ही प्रहार करना चाहिये।

ट्रेड-यूनियनों (मजदूर-संघों) का काम, दुनियाके किसी भी देशमें, नौकरीकी अिस मालिक-मजदूर पद्धतिको मिटाना नहीं है। वे तो अुस पद्धतिके सहायक अंग हैं। मजदूरीमें सुधारके लिअे वे किसी भी तरहका संघर्ष करें, अगर वे लूटको रोकना और मिटाना चाहते हैं, तो अुन्हें अिस सारी मालिक-मजदूर पद्धतिको ही मिटाना पड़ेगा। लेकिन यह तो क्रांतिनिष्ठ अराजकतावादियोंका — सिंडीकेलिस्ट यूनियनोंका ध्येय है। ये लोग सारे अुद्योग-धन्धे अपने हाथमें लेना चाहते हैं; अुत्पादन और वितरणका काम राज्य या मालिक लोग व्यक्तिशः अपनी सुविधाके अनुसार यानी दूसरोंको लूटनेके लिअे चलायें, अिसकी बजाय वे अुन्हें समाजके लाभके लिअे खुद चलाना चाहते हैं। लेकिन श्री खण्डूभाओ या भारतके दूसरे ट्रेड-यूनियनिस्ट (मजदूर-संघोंके नेता) यह बात नहीं चाहते। अन्यथा अुन्हें कहना होगा कि हम नौकरी और मजदूरीकी अिस सारी पद्धतिके खिलाफ हैं, अिसे मिटाना चाहते हैं और अुद्योग-धन्धोंको अपने हाथमें लेकर अुन्हें समाजके लाभके लिअे चलाना चाहते हैं।

रूसमें मजदूर-संघोंका संघटन राज्यने अपनी लूटमें अुनसे मदद लेनेके लिअे किया है। अुनके पदाधिकारियोंका चुनाव नाममात्रके लिअे होता है, क्योंकि चुनावमें अुम्मीदवारोंकी तरह सिर्फ अुन्हीं लोगोंको खड़ा होने दिया जाता है जिन्हें सरकारकी सहमति प्राप्त हो। और जो वोट देता है, अुसे अपना वोट अुन्हीं लोगोंको देना पड़ता है। अुन्हें वोट न देना राज्यके खिलाफ द्रोह माना जाता है। वोट बिलकुल न देनेमें भी मुसीबत है। अैसे आदमीको काम देनेसे अिनकार कर दिया जाता है। अिन पदाधिकारियोंका काम मजदूरोंसे अनुशासनका पालन करवाना और सख्त काम लेना ही होता है; वे मजदूरों पर कड़ी निगाह रखते हैं और सरकारके पास अुनके खिलाफ शिकायत करते हैं। और यह तो है ही कि मजदूरोंकी अिस 'पितृभूमि'में मजदूरोंको हड़ताल करनेका कोअी अधिकार नहीं है, भले वह मजदूरोंको संविधानमें कागज पर दिया गया हो, लेकिन अुसका अुपयोग राजद्रोह माना जाता है।

श्री देसाओ कहते हैं कि पश्चिमकी आर्थिक विचारधारा पुरानी होकर निरुपयोगी हो गयी है और "नये भारतके निर्माणमें हम क्या योग दें, यह बात हमें खुद सोचना है।" पर वे यह नहीं बताते कि हमारी आर्थिक विचारधारा और पश्चिमकी विचारधाराके बुनियादी मुद्दोंमें फर्क क्या है। हमारे यहां भी पश्चिमकी वही नौकरी और मजदूरीवाली लूटकी पद्धति चल रही है। अुपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद, जिनकी हम अितनी बुराओ करते हैं, सफल लुटेरोंकी अिसी लूटकी पद्धतिका विस्तार हैं। अगर हम अपने घरमें यह लूटकी पद्धति जारी रखते हैं, तो मौका मिलने पर हमें दूसरे देशोंको भी लूटना पड़ेगा। यदि हम वैसा नहीं कर पाते, या जमाना अितना बदल गया है कि वैसा करना अब सम्भव नहीं है, तो अिसका यह अर्थ नहीं है कि हमने अपने देशमें लूटका यह कारोबार बन्द कर दिया है। सच पूछो तो आज तक चलनेवाली सारी पद्धतियां — रूसी और चीनी पद्धतियां भी — दुनियाके अिस छोरसे अुस छोर तक बुनियादी तौर पर अेक ही हैं। और जब तक हम नौकरी और मजदूरीकी पद्धति जारी रखते हैं, तब तक हम भी अुससे बाहर नहीं जा सकते। यदि हम अिसे मिटाना चाहते हैं, तो हमें अुन सारी पद्धतियोंको ही मिटा देना चाहिये, जिनमें लूट जरूरी और अिसलिअे अनिवार्य होती है।

(अंग्रेजीसे)

म० प्र० ति० आचार्य

## सौन्दर्यका प्रदर्शन

अेक भाओने मुझे किसी दैनिक अखबारसे अेक तसवीरकी कतरन भेजी है। तसवीर 'मिस आस्ट्रिया, १९५३'की है, जो अगली जुलाओमें केलीफोर्नियामें होनेवाली 'मिस यूनीवर्स' यानी विश्व-सुन्दरी प्रतियोगितामें भाग लेनेके लिअे अमेरिका जायेगी। कतरन पर अुन्होंने लिखा है, 'अुस अखबारसे, जो शराबबन्दीमें श्री मोरारजी देसाओके साथ है।' अुनके अिस टीका-रूप कथनका अिशारा साफ है — अेक ओर अिस अखबारकी नीति शराबबन्दीका समर्थन करनेकी है, दूसरी ओर वही जरूरतसे ज्यादा धनी तथा भरपेट अुम्दा भोजन पानेवाले अमेरिकनों द्वारा आयोजित सौन्दर्य-प्रतियोगिताओंका विज्ञापन करता है और अभद्रताका अुदाहरण पेश करता है। गत वर्ष कुछ लोगोंने हमारे यहां भी कुछ बड़े शहरोंमें 'मिस अिण्डिया' यानी भारत-सुन्दरी प्रतियोगिताका आयोजन किया था, और यहांसे किसीको विश्व-प्रतियोगितामें भाग लेनेके लिअे भी भेजा था। हमारे समाजमें स्त्रीका जो स्थान है, अुसकी अिस अवमाननाका स्वाभाविक तौर पर कड़ा विरोध हुआ था और स्वर्गीय श्री मशरूवालाने लोगोंकी अिस स्वस्थ और प्रशंसनीय प्रतिक्रियाका समर्थन करते हुअे लिखा था :

> "मुझे लगता है कि यह या अैसी प्रवृत्तियां अुन स्त्रियों और पुरुषोंके दिमागकी अुपज हैं, जो रूपके व्यापार पर अपनी जीविका चलाते हैं। खेदकी बात है कि अिस प्रवृत्तिको अैसी महिलाओंका सहयोग मिल रहा है, जिनसे हम ज्यादा विवेककी अुम्मीद रखते हैं।" ('हरिजनसेवक', २२ मार्च, १९५२, 'सौन्दर्यकी प्रदर्शनी')

> "अैसे प्रदर्शन भारतीय संस्कृति और परम्पराके विरुद्ध हैं।" ('हरिजनसेवक', ३१ मअी, १९५२)

हमने भारतमें स्त्रीको माताके रूपमें पूजना सीखा है। स्त्री-जातिके प्रति हमारे अिस दृष्टिकोणका आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व बहुत गहरा है। सौन्दर्य-प्रतियोगिताओं जैसे आयोजन, जिनमें भाग लेनेवाली स्त्रियोंको अुपस्थित दर्शकोंके सामने नहानेकी बिलकुल नाकाफी पोशाकमें, लगभग खुले शरीर आनेके लिअे कहा जाता है, मनुष्यकी कामवृत्तिका ही रंजन करते हैं, अुसकी सौन्दर्य या कलाकी वृत्तिका नहीं। निश्चित है कि अिस सारे कार्यक्रमके पीछे मनुष्यके भीतर पैठी हुअी कामकी प्रेरणा है, जिसे फ्रायड 'वासना' कहता है। अितिहास बताता है कि सम्पत्तिशाली राष्ट्र सुख और समृद्धिका भोग करते करते अपनी फुरसतके अुपयोगके लिअे अनुचित तरीके अख्तियार करने लगते हैं, और यदि सावधान न हों तो स्त्री और शराबके शौकमें फंसकर पतनकी राह पर चल पड़ते हैं। अैसी हालतमें तथाकथित कला अुनके विलासकी सहायक और अिस पतनको छिपानेवाला सांस्कृतिक आवरण बन जाती है।

www.vinoba.in

किसी समझदार अमेरिकनने अपने देशवासियोंका ध्यान शराबके प्रचारके कारण वहां जो 'पियक्कड़पनकी प्रदर्शनी' देखनेमें आती है, अुसकी ओर खींचा था और अुन्हें सावधान किया था कि यह बुराओ दूर होनी चाहिये। हम आशा करते हैं कि अिन सौंदर्य-प्रतियोगिताओंमें जो 'नग्नताकी प्रदर्शनी' होती है, अुसके खिलाफ भी कोओ आवाज अुठायेगा। अभी अेक सिनेमा देखनेवाले भाओके मुंहसे मैंने सुना कि कुछ दिन पहले बम्बअीमें अेक सिनेमाघरमें कोओ चित्र दिखाया जा रहा था। वह चित्र बिलकुल ही असफल रहता अगर अुसके साथ पिछली विश्व-सुन्दरी प्रतियोगिताकी छोटीसी रील न दिखाओ जाती। अुसके कारण वहां लोगोंकी खूब भीड़ जमा होती थी। सौन्दर्यका अैसा भ्रष्ट अुपयोग करना बहुत अनुचित है। क्योंकि जब अुसका अैसा अुपयोग किया जाता है, तब सौन्दर्य सौन्दर्य ही नहीं रह जाता। तब वह कलाकी चीज भी नहीं रहता, क्योंकि सच्ची कला तो हमारे अन्दर जो असुन्दर है, असत् है और पाशविक है अुसका परिष्कार करके अुसे अुदात्त रूप प्रदान करती है। भारतको विलास-प्रिय पश्चिमके अिन अश्लील आयोजनोंमें कोओ भाग नहीं लेना चाहिये।

३०-४-'५३ **मगनभाओ देसाओ**

(अंग्रेजीसे)

## वस्तुअें और मुनाफा

[अेक मित्रने किसी पत्रसे नीचे दिया जा रहा अुद्धरण भेजा है। आशा है पाठक अुसे दिलचस्पीके साथ पढ़ेंगे। प्रेषकने अुद्धरण कहांसे लिया गया है और किसका है, अिसकी कोओ जानकारी नहीं दी है। —सं०]

अुद्योगोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको मालिक यंत्रोंकी तरह ही अपने सहायक साधनोंके रूपमें संघटित करता है, मजदूरोंका अपना कोओ स्वतंत्र मूल्य नहीं होता। और अिस संघटनका लक्ष्य वस्तुओंका निर्माण करना कम है, मालिकके लिअे मुनाफा पैदा करना ज्यादा है। अिसके पीछे लोभकी प्रेरणा है। वस्तुओंका अुत्पादन तो अेक प्रासंगिक घटनामात्र है, अगर वस्तुओंका अुत्पादन किये बिना मुनाफा कमाना संभव होता, तो अुन्हें छोड़ दिया जाता।

लेकिन यह सम्भव नहीं है अिसलिअे अुनका अुत्पादन जारी रहने दिया जाता है, बल्कि अुसे प्रोत्साहन भी दिया जाता है — यहां तक कि अुत्पादनका परिमाण कभी-कभी अन्तिम हद पर पहुंच जाता है और मुनाफा मिलना बन्द हो जाता है।

मुनाफा तो वस्तुओंका अुत्पादन किये बिना सम्भव नहीं है, पर वस्तुओंका अुत्पादन मुनाफेके बिना हो सकता है, अिस बातका ज्ञान हम रखें तो अुससे हमारी बहुतसी कठिनाअियां दूर हो सकती हैं। अुपयुक्त परिश्रम करनेसे वस्तुओंका निर्माण तो किया ही जा सकता है, अुसमें सन्देहकी गुंजाअिश नहीं है, पर मुनाफेके बारेमें निश्चय नहीं हो सकता।

यदि वस्तुओंका निर्माण मुनाफेके बिना जारी रह सकता है, तो यह बात समझमें नहीं आती कि हम अपने अुत्पादनके कारोबारमें से मुनाफेका वर्जन ही क्यों नहीं कर देते। मुनाफा वस्तुका मूल्य कम करता है और अुसकी कीमत बढ़ाता है। अिस कथनमें विरोधका आभास हो सकता है, पर वह पूरी तरह सच है।

(अंग्रेजीसे)

## चरखा-संघ और कपास

१. अेक समय था जब हिन्दुस्तानके हरेक कोनेमें कपासकी फसल होती थी। घरेलू तथा ग्रामाण वस्त्र-अुद्योग अुसके आधार पर चलते थे। हिन्दुस्तान अुस वक्त कपास और कपड़के बारेमें स्वावलंबी तो था ही अिसके अलावा, बाहरके देशोंमें भी यहांसे कपड़ा भेजा जाता था।

२. कपड़ेकी मिलोंके आविष्कारके बाद गृह-अुद्योगों तथा ग्रामोद्योगोंके तौर पर चलनेवाला तथा परदेशोंमें निर्यात होनेवाले हिन्दुस्तानके कपड़ेका धंधा पूर्णतया नष्ट हो गया और परिणाम यह हुआ कि,

(अ) अब अुसे बाहरसे कपड़ा तथा कपास आयात करनी पड़ती है, और

(आ) घरेलू कपड़के धंधेमें लगे हुअे लाखों लोग बेकार हो गय हैं।

३. करीब चालीस वर्ष पूर्व सिंधमें मोहेंजोदारोसे खोदकर निकाले गये प्राचीन अवशेषोंमें पुराने कपड़के नमूने भी पाये गये हैं। वे पांच हजार वर्ष पूर्वके हैं। अिन कपड़ोंका सूत अलग करके अुसका बट खोला गया और जांच की गयी, तो पाया कि अुसके रेशे जी० आर्बोरियम् (रोजिया, जरीला, करंगनी आदि) व जी० हरबेसियम् (सूरती, विजय, कल्याण आदि) जातिकी कपासके हैं। कपासकी यही जातियां आज भी मुख्यतया हिन्दुस्तानमें अुपजायी जाती हैं। रेशोंकी मजबूतीकी दृष्टिसे हिंदुस्तानी-कपासकी जातियां सबसे अच्छी हैं, अिसे सभी वैज्ञानिक आज मानते हैं।

४. हिंदुस्तानी-कपासके रेशे साधारणतया छोटे होते हैं। लेकिन मिलोंके लिअे लंबे रेशे चाहियें। मिलोंकी यह मांग पूरी करनेके लिअे हिन्दुस्तानमें जबरदस्ती विदेशी कपासकी जातियां दाखिल की गओं, जिसका नतीजा हिंदुस्तानी-कपासकी तुलनामें यह हुआ है,

(अ) प्रति अेकड़ कम पैदावार, (आ) कमजोर रेशे, (अि) अपक्व रेशोंका अूंचा प्रतिशत, (अी) पौधोंमें कीड़ों और बीमारियोंकी अधिकता।

५. कपास पैदा करनेवाले दूसरे नंबरके देशमें अमेरिकामें वनस्पति-शास्त्रज्ञ जी० आर्बोरियम् जातिकी कपासोंको अुपजानेका और अमरिकन-कपासोंकी मजबूतीको बढ़ानेका प्रयत्न कर रहे हैं। अिसके लिअे वे अमरिकन कपासोंको आर्बोरियम् जातियोंसे संकर करके आर्बोरियमकी मजबूतीवाली दो भिन्न जातियोंसे बनी संकर जाति तैयार कर रहे हैं।

६. अिधर हमारे वनस्पति-शास्त्रज्ञ सत्ताधारी सरकारकी सहायतासे विदेशी कपासकी जातियोंको, जो रेशोंकी लंबाअीको छोड़ दें तो हर बातमें हिंदुस्तानी-कपासकी जातियोंसे कम दर्जेकी हैं, हमारे देशमें जबरदस्ती ठूंस रहे हैं।

७. मिलोंके लिअे लंबे रेशे ही चाहियें, फिर अुससे कपड़ा टिकाअू बने या न बने, लेकिन अुसके कारण खादीको भुगतना पड़ता है। खादी ज्यादा टिकती है, यह बात अब नहीं रही। खादीको टिकाअू बनानेकी कोशिश होना चाहिये। यह बात योग्य कपास अिस्तेमाल करनेसे ही हो सकती है। हमें लंबे रेशेसे कोओ विरोध नहीं है, बशर्ते रेशेकी मजबूती व कपड़के टिकाअूपनका खयाल रखा जाय। आज तो लंबे रेशेकी धुनमें कपासकी पुरानी व नयी अनेक जातियां बिगाड़ी जा रही हैं तथा कमजोर बनाओ जा रही हैं। चरखा-संघकी कपास-नीति खादीको टिकाअू बनानेके लिअे अुपयुक्त कपासकी पैदावार बढ़ाकर अुसे खादी-अुत्पत्तिके काममें लानेकी है।

**पुण्यव्रत घोष**

(ता० १०-५-'५३ की 'कताओ-मंडल-पत्रिका', सेवाग्रामसे)

www.vinoba.in

## मद्राससे देशके लिअे सबक

अेक जमाना था जब हम हिन्दू-मुसलमान आपसमें लड़ते थे और अुसका बहाना बताते थे मस्जिदोंके पास बाजा बजना और गोवध। पाकिस्तान बननेके बाद अिन बातोंमें फर्क जरूर हो गया, हालांकि दोनों जातियोंमें जितनी अेकता हम चाहते थे और अब भी जरूरी है, अुतनी सचमुच देखें तो नहीं हुअी है। अभी भी यह काम हमारे सामने पड़ा है।

अिसके अलावा, अब अेक नया काम भी देशके सामने आ रहा है। हिन्दू हिन्दूमें अब लड़ाअीकी नौबत आ रही है। जैसे कि मद्रासके द्रविड़ संघका मूर्तिभंजन आन्दोलन, जिसके बारेमें पाठकोंने अखबारोंमें देखा होगा। यदि अिस संघके लोग मूर्तिपूजामें न मानते हों, तो अिसके लिअे अुन्हें कोअी मजबूर नहीं कर सकता। लेकिन वे खुद भी अपने देव-देवियोंको नहीं पूजते हों, सो भी सही नहीं है। अुन्होंने तो केवल अिस बातका झंडा अुठाया है कि अपने विरोधी हिन्दुओंके माने जानेवाले देव गणेशजीकी मूर्ति जाहिर रूपसे तोड़ी जाय। दक्षिणकी अब्राह्मण जातियोंमें ब्राह्मणादि वर्गोंके प्रति अेक प्रकारका विरोधभाव जमानेसे चला आ रहा है। अिसका कारण राजकीय और सामाजिक स्पर्धा रहा है। अब यह विरोध दूसरोंके पूज्य देवोंकी मूर्ति तोड़कर और अुनका अपमान करके प्रकट किया जाता है। जात-पांतकी जो बला हममें छिपी पड़ी है, अुसके बाहर आनेका यह अेक निशान है। यह अेक खतरनाक बात होगी। धर्मक्षेत्रमें अिसका घुसना अुसे और भी अनुचित बना देता है।

हिन्दूधर्म मूर्तिको मानता है और हिन्दू लोग अुसे पूजते हैं। लेकिन हिन्दूधर्म यह भी बताता है कि मूर्ति मूर्ति ही है, देव नहीं। देव तो हरअेक मनुष्यके अंतरमें बैठा है, जिसे याद करनेके लिअे प्रतीकरूप मूर्ति है। अिस कारण दरअसल देखें तो मूर्ति टूटनेसे जड़ मूर्ति ही टूटती है। परन्तु अिससे लोगोंके दिलमें रंज पैदा होता है, और अुसीको लेकर यह सब चलाया जाता है। बाकी तत्त्वकी दृष्टिसे देखें, तो अिसमें निरी बेसमझी और नास्तिकता ही दिखाअी देती है; और न अिसमें कोअी फायदा ही नजर आता है।

अिस बेजा बातका क्या अुपाय? लोगोंको समझदारीके साथ शांत और खामोश रहना चाहिये। जैसे गाली देनेवालेकी गाली यदि हम न सुनें और न विरोधमें गाली दें, तो गाली जहांकी तहां बेकार हो जाती है, वैसे ही मूर्तिभंजन भले ही हो, अुससे हम न चिढ़ें, तो वह बेकार हो जायगा और अपने-आप रुक जायगा। जैसे बच्चे खिलौने तोड़ते हैं, वैसे मूर्तिभंजक जितनी भी मूर्ति तोड़नेके वास्ते खरीद सकें, खरीदकर भले ही तोड़ें; अिससे मूर्ति बनानेवालोंको धंधा मिलेगा। बनानेवाले यदि मूर्तिका अिस तरह दुरुपयोग होता देखकर अुन्हें न बेचेंगे, तो वे खुद बनाना सीखेंगे। यह अेक अिल्म अुन्हें मिलेगा, सो भी अच्छा ही होगा। परन्तु मूर्तिपूजकोंको अपनी ओरसे यह समझकर खामोश रहना चाहिये कि अिसमें देवका अपमान नहीं है; बल्कि यदि हम गुस्सेमें आकर लड़ेंगे तो अुससे सचमुच देवका अपमान होगा। हम देवसे प्रार्थना करें कि हे प्रभु, तू अिनको सन्मति दे, ताकि वे तेरे पाक रास्ते पर रहें और अपने भाअियोंसे गुस्सा न करें; गुस्सा आ भी जाय, तो अुसे अिस ढंगसे प्रकट करने पर काबू पा सकें। श्री राजाजी अिस नीतिसे काम ले रहे हैं, यह देखकर बड़ी खुशी होती है।

मद्रासकी अिस हलचलसे सारे देशको भी सबक मिल रहा है। ब्रिटिश राज्यके जमानेके धर्मवार कौमी झगड़ोंकी झंझट क्या अब नया रूप पकड़ेगी? क्या अब हम भाषावार कौमियत और जातिवार कौमियतके विचारोंमें पड़ेंगे? युरोप अमेरिकाके गोरे लोग आर्थिक वर्ग और चमड़ीके वर्णकी जुदाअीको लेकर लड़ रहे हैं। क्या हम भाषा और जात-पांतकी जुदाअीको लड़नेका आधार बनायेंगे? हरगिज नहीं। मद्रास हमें यह सबक सिखा रहा है। अभी हमने अस्पृश्यता भी पूरी-पूरी दूर नहीं की। जात-पांतकी बुराअीने हमारे समाजमें गहरी जड़ जमा ली है। अुसीके साथ अस्पृश्यताकी जड़ भी जमी है। अिन बुराअियोंसे हमें संभलकर चलना है; नहीं तो सामाजिक और आर्थिक समता ही नहीं, राजकीय समता भी, फिर वह जितनी भी हो, नहीं टिकेगी। जैसे शरीरमें जाकर खुराक हमारे रोगोंको भी पुष्ट करता है, वैसे स्वातंत्र्यरूपी पौष्टिक खुराक मिलने पर हमारे समाज-शरीरके जात-पांत अित्यादि मूलरोग भी पुष्ट होते हैं। हम याद करें कि अिन रोगोंके कारण ही हम परतंत्र बने थे। अिसलिअे अिन्हें दूर करके ही हम स्वतंत्र रह सकते हैं। राजनीतिक स्वतंत्रता और समानताका अुपयोग हमें अिन प्रजाशरीरके मूल रोगों पर काबू पाकर अुन्हें दूर करनेके लिअे ही करना है; नहीं तो अिसी शस्त्रसे हम यादवा खेलकर मर भी सकते हैं।

३-६-'५३ **मगनभाअी देसाअी**

## धर्म-परिवर्तनका सच्चा अर्थ

श्री संपादक 'हरिजन',

अखबारोंमें हाल हीमें प्रकाशित अिस खबरको पढ़कर बहुत सन्तोष हुआ कि भारत-सरकारने विदेशी अीसाअी धर्म-प्रचारकोंको हमारे देहातोंमें रहनेवाले गरीब हिन्दू ग्रामीणोंका अीसाअी धर्ममें धर्म-परिवर्तन करनेसे रोक दिया है। ये लोग जोर-जबरदस्ती या प्रलोभनके जरिये यह काम अभी तक चलाये जा रहे हैं। धर्म-परिवर्तन पर लगाअी गअी यह रोक शहरोंमें रहनेवाले भारतीयों पर भी लागू होगी।

धर्म-प्रचारका अुत्साह प्रगट करनेकी ठीक जगह युरोपके अुन अीसाअी देशोंमें है, जो केवल नामके अीसाअी हैं, और जो अीसाके अिस अुदात्त अुपदेशके खिलाफ कि 'अपने पड़ोसीको (यानी सारी दुनियाको) अपनी ही तरह प्यार करो' स्वार्थ और धनके अमर्याद लोभसे दूषित गैर-अीसाअी जीवन जी रहे हैं।

धर्मप्रचारकोंको चाहिये कि वे युरोपके अिन नाममात्रके अीसाअियोंको सच्चे और अीमानदार अीसाअी बनायें, जो लड़ना और युद्ध करना छोड़ दें और जो दुनियाकी सुख-शांति तथा समृद्धिके लिअे अपने सामान्य जीवनमें, लोगोंके साथ दैनिक व्यवहारमें, व्यापारमें, राजनीतिमें, राष्ट्रीय और आन्तरराष्ट्रीय मामलोंमें अीमानदार, सत्यपरायण, न्यायी, संयमी, दयावान् और सरलता तथा सादगीका आचरण करनेवाले बनें।

धर्म-परिवर्तनका सच्चा अर्थ बुरा जीवन छोड़कर अच्छा जीवन ग्रहण करना है, अीश्वरने हमें जिस धर्ममें जन्म दिया है, अुसे छोड़कर दूसरे धर्ममें चले जाना नहीं।

५४, वुड हाअुस रोड, **सोराबजी आर० मिस्त्री**
कोलाबा, बम्बअी
(अंग्रेजीसे)

**विषय-सूची**


| | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| कार्यकर्ताओंसे — २ | विनोबा | ११३ |
| कुछ बुनियादी विचार-दोष | रेने फुलप-मिलर | ११४ |
| सूक्ष्म भौतिक लोभकी दोषी | मगनभाअी देसाअी | ११६ |
| धर्म-परिवर्तन | गांधीजी | ११७ |
| पूंजीवाद और ट्रेड-यूनियनवाद | म० प्र० ति० आचार्य | ११८ |
| सौन्दर्यका प्रदर्शन | मगनभाअी देसाअी | ११८ |
| वस्तुअें और मुनाफा | | ११९ |
| चरखा-संघ और कपास | पुण्यव्रत घोष | ११९ |
| मद्राससे देशके लिअे सबक | मगनभाअी देसाअी | १२० |
| धर्म-परिवर्तनका सच्चा अर्थ | सोराबजी आर० मिस्त्री | १२० |


www.vinoba.in